



National Journal of Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177

NJHSR 2023; 1(49): 212-215

© 2023 NJHSR

www.sanskritarticle.com

डॉ. के. पुरुषोत्तमाचार्य

असिस्टेंट प्रोफेसर,

कृष्ण यजुर्वेद विभाग,

श्री वेङ्कटेश्वरा वेद विश्वविद्यालय,

तिरुपति

अष्टांगयोगान्तर्गत यमयोग की समीक्षा

(श्रीपांचरात्रागमांतर्गत अगस्त्यसंहिता के माध्यम से)

डॉ. के. पुरुषोत्तमाचार्य

प्रस्तावना -

'योगः कर्मसु कौशलम्' यह बात भगवद्गीता में साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को योगाभ्यास की आवश्यकता का उपदेश देने के संदर्भ में कही है। इस वाक्य का मतलब यह है कि लोगों को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए कुछ न कुछ काम तो करना ही पड़ता है। वह काम तब सफल होता है जब काम करते समय कोई भी गलती न हो। और काम करते समय गलती न हो, तो मन को शत-प्रतिशत काम में लगाना होगा। मन का लक्षण यह होता है कि वह बंदर की तरह चंचल होता है; इस संदर्भ में क्या करना चाहिए? उसे स्थिर रूप से नियंत्रित करना चाहिए। वह मनोनियंत्रणात्मक सामर्थ्य लोग कैसे पाएँगे? उत्तर यह है योगसाधना से।

सारांश यह है कि लक्ष्य तक पहुँचने के उद्देश्य से साधकों द्वारा किए जाने वाले कामों में कौशल या क्षमता पाने के लिए योगाभ्यास करना आवश्यक है। उस योगाभ्यास की जानकारी कहाँ से मिलती है? श्रुति, इतिहास, स्मृति, पुराण, आगम आदि प्राचीन भारतीय वाङ्मय से। विशेष रूप से योगाभ्यास के लिए ही पतंजलि आदि महर्षियों ने प्रत्येक दर्शन की स्थापना की है। यद्यपि बाकी वाङ्मय में योगशास्त्र का उपदेश मिलता है, तथापि आगम-वाङ्मय के माध्यम से योगशास्त्र का परिशोधन एक विशिष्ट प्रयास कहना अनुचित नहीं है। आगम-वाङ्मय की विशेषता यह है कि वह साक्षात् भगवान् के मुखारविन्द से नारद आदि मुनियों के उद्देश्य से निःसृत हुई है। और अब आगम-वाङ्मयांतर्गत संहिताओं के माध्यम से, विशेषतः अगस्त्य संहिता के दृष्टिकोण से, योगाभ्यास की समीक्षा की जा रही है।

योग से हि ज्ञान प्राप्ति -

उसी संहिता में कहा गया है कि जीव काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और ईर्ष्या नामक छह शत्रुओं से बंधे हुए हैं। ज्ञान ही उस बंधन से मुक्ति का एकमात्र साधन है। यदि ज्ञान छिपा हुआ है तो ज्ञान और योग से संबंधित सत्य का प्रमाण नहीं दिया जा सकता। इसलिए कहा गया है कि जो मुक्ति की इच्छा रखता है, उसे योग का अभ्यास करना चाहिए और संसार से मुक्त होना चाहिए। लेकिन योग के बिना ज्ञान मुक्तिदायक कैसे हो सकता है? बिल्कुल नहीं। यहाँ तक कि ज्ञान के बिना योग भी मुक्ति का मार्ग नहीं दिखाता। "योगोपि ज्ञान हीनस्तु न क्षमस्यात्प्रदर्शितुम्"¹। यदि ज्ञान ही ज्ञान है, तो वह ज्ञात किए जाने वाले विषय का प्रदर्शन है, और वह विषय परमात्मा है, जो निराकार, अरूप और अन्य गुणों से विभेदित है। योग गुरु से सीखना चाहिए। उस योग के द्वारा भगवान् के स्वरूप का ध्यान करना चाहिए; यही योग और ज्ञान कहलाता है।

योग के प्रकार -

योग और मन की प्रवृत्तियों पर नियंत्रणः

Correspondence:

डॉ. के. पुरुषोत्तमाचार्य

असिस्टेंट प्रोफेसर,

कृष्ण यजुर्वेद विभाग,

श्री वेङ्कटेश्वरा वेद विश्वविद्यालय,

तिरुपति

“योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः”² योग मन की प्रवृत्तियों पर नियंत्रण के माध्यम से आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने की प्रक्रिया है। योग शास्त्रों में मन्त्र, हठ, लय, राजयोगों को प्रमुख माना जाता है। इनमें से उत्तरोत्तर शक्तिशाली है, राजयोग सबसे शक्तिशाली है। पांचरात्रान्तर्गत श्रीप्रश्न संहिता में वर्णित है कि जो लोग इस संसार में सुखी जीवन जीना चाहते हैं और परमात्मा के ज्ञान से विरक्त हैं, वे मंत्रयोग का अभ्यास करते हैं।

मातृकादियुतं मन्त्रं द्वादशाब्दं जपेच्छुचिः।

क्रमेण लभते तेनाणिमाद्यष्टगुणान्वितम्॥

अल्पबुद्धिरिमं योगं सेवते साधकाधमः।

लययोगश्चित्तलयः कोटिशःपरिकीर्तितः॥³

शुद्ध मन वाले व्यक्ति को बारह वर्षों तक मातृका और अन्य मंत्रों से युक्त मंत्र का जाप करना चाहिए। धीरे-धीरे उसे सद्गुणों और अन्य गुणों से युक्त मोक्ष का फल प्राप्त होता है। निम्न बुद्धि वाला साधक इस योग का अभ्यास करता है। लय योग और मन की लय का वर्णन करोड़ों ग्रंथों में किया गया है। आगम कहता है कि अणिमा की अष्टांग सिद्धि प्राप्त करने के लिए मंत्र योग का सहारा लेना चाहिए, परन्तु जो साधक इससे संतुष्ट होकर उपरोक्त लयबद्ध योग का त्याग कर देता है, वह सबसे नीच है। मंत्रिका उपनिषद में कहा गया है कि जहाँ प्रकृति का विलय होना चाहिए

यस्मिन् सर्वमिदं प्रोक्तं ब्रह्मस्थावरजंगमम्।

तस्मिन्नेव लयं याति सन्नत्यः सागरे यथा।

अत्रैष ते लयं याति लीनाश्चाव्यक्तशालिनः॥⁴

जिसमें समस्त ब्रह्म, चल एवं अचल, समाहित है। जैसे नदियाँ सागर में बहती हैं, वैसे ही वे उसी जल में विलीन हो जाती हैं। यहाँ वे विलीन होकर अव्यक्त में समा जाती हैं।

उपरोक्त मंत्र का अर्थ यह है कि जिस प्रकार नदियाँ और अन्य तत्व सागर में विलीन होकर अव्यक्त हो जाते हैं, उसी प्रकार समस्त प्रकृति वैदिक ब्राह्मणों द्वारा ज्ञात ब्रह्म में विलीन होकर अव्यक्त हो जाती है। अतः, जो ब्रह्म में विलीन होना चाहता है, उसे योग, शास्त्र और अंगालय के योग द्वारा सिद्धि प्राप्त करनी चाहिए। इस प्रकार, वेदों द्वारा समर्थित होने के कारण इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। आगम में सच्चे लयबद्ध योग का वर्णन किया गया है। चलना, खड़े रहना, सोना, खाना, परमेश्वर का ध्यान करना यही लय का योग है—

गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन् भुञ्जन् ध्यायन् निष्कतमीश्वरम्।

स येव लययोगाख्यः हंसयोगमतः शृणु॥⁵

योग के अनुशासन में भी कहा गया है - शरीर का ज्ञान निश्चित रूप से ब्रह्मांड के ज्ञान की ओर ले जाता है। गुरु की शिक्षाओं से शरीर का ज्ञान प्राप्त करने के बाद, महान ऋषियों द्वारा बताए गए इस लयबद्ध योग को ही योग का नाम दिया गया है। तब योग का ज्ञाता सिद्ध हो जाता है। प्राचीन ऋषि कहते हैं कि यह लयबद्ध संयोजन ही आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करता है—

अष्टांग योग का आठ प्रकार –

यमश्च नियमश्चोभावासनं प्राणसंयमः।

प्रत्याहरो धारणं च ध्यानं भूमध्यमे हरेः।

समाधेस्समतावस्था साष्टाङ्गं योग उच्यते॥⁶

1. यम (सामाजिक अनुशासन)

- अहिंसा (हिंसा न करना)
- सत्य (सत्य बोलना)
- अस्तेय (चोरी न करना)
- ब्रह्मचर्य (संयम)
- अपरिग्रह (अनावश्यक संग्रह न करना)

2. नियम (व्यक्तिगत अनुशासन)

- शौच (शुद्धता)
- संतोष (संतुष्टि)
- तप (अनुशासित साधना)
- स्वाध्याय (शास्त्र अध्ययन)
- ईश्वरप्रणिधान (ईश्वर में समर्पण)

3. आसन - शरीर को स्थिर और स्वस्थ रखने वाले योगासन।

- शरीर को स्थिर और स्वस्थ रखने वाले योगासन।

4. प्राणायाम - श्वास-प्रश्वास का नियंत्रण। मन को शांत और एकाग्र बनाने का साधन।

5. प्रत्याहार - इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाकर भीतर की ओर ले जाना।

6. धारणा - मन को किसी एक विषय, देवता, मंत्र या बिंदु पर स्थिर करना।

7. ध्यान - निरंतर और अविच्छिन्न एकाग्रता।

8. समाधि - ध्यान की पराकाष्ठा, जहाँ साधक और साध्य का भेद मिट जाता है।

(इन सभी अष्टांग योग लक्षणों का प्रमाण श्लोक पांचरात्रान्तर्गत अगस्त्य संहिता 19.44, 19.45 में देख सकेंगे।)

अष्टांग योग में प्रथम यम योग है। यह यम योग दस प्रकार से होता है। यम योग की विशेषता यह है – अहिंसा, सत्यवादिता, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य, दया, ईमानदारी, क्षमा, आत्मसंयम, संयमित भोजन और पवित्रता दस यम हैं।

अहिंसा का लक्षण है -

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दयार्जवम्।

क्षमाधृतिर्मिताहारश्शौचं चेति यमा दश॥⁷

योग के विशेष महान ऋषियों ने आगम योग, लयबद्ध योग और हंस योग के बीच अंतर का वर्णन किया है। और वे अंतर इस प्रकार हैं: यम और नियम सभी प्राणी हैं और जीवन शक्ति के नियंत्रक हैं। मूलों के लिए भोजन करना और भौहों के बीच में भगवान का ध्यान करना। समाधि की अवस्था में आँखों को साथ समता की स्थिति को योग कहते हैं।

फिर, इन आठ योगों में निम्न कोटि के भेदों का अवसर उल्लेख किया गया है, और यम के दस प्रकार हैं। यम की विशेषता यह है: न करना, और यही बात अगस्त्य संहिता में कही गई है। हे ऋषि, इससे सभी जीवों को कष्ट होता है।

दस प्रकार की यमयोगों का लक्षण -

सर्वेषामपि जन्तूनामक्लेशजननं मुने ।

वाङ्मनःकर्मभिर्नूनमहिंसेत्यभिधीयते॥⁸

दस यमों में अहिंसा का अर्थ है अन्य सभी जीवधारियों कहा जाता है कि वह अपने कार्यों से अहिंसक था।

दस यमों में दूसरे यम सत्य का लक्षण -

यथादृष्टश्रुतार्थानां स्वरूपकथनं पुनः।

सत्यमित्युच्यते धीरैः तद्ब्रह्मप्राप्ति कारणम्॥⁹

जो कुछ देखा और सुना जाता है, उसमें ज़रा सा भी परिवर्तन किए बिना कही गई बात को सत्य कहा जाता है। अहिंसा ही सर्वोच्च धर्म है और वह सत्य पर आधारित है। वही परम सत्य की प्राप्ति का कारण है। महाभारत का यह कथन अहिंसा और सत्य की निर्मलता को दर्शाता है।

यम भेदों में तीसरे प्रकार अचौर्य -

तृणादेरप्यनादानं परेषां च तपोधन ।

अस्तेयमेतदप्यंगं ब्रह्मप्राप्तिस्सनातनम्॥¹⁰

यम भेदों में तीसरे प्रकार चोरी का प्रतीक है। महान ऋषियों का कहना है कि मन, वाणी और शरीर की क्रियाओं द्वारा दूसरों की वस्तुओं के प्रति लालसा के बिना चोरी नहीं करनी चाहिए।

दस प्रकार की यमयोगों में चौथा यमयोग है ब्रह्मचर्य -

अवस्थास्वपि सर्वासु कर्मणा मनसा गिरा।

स्त्रीसंगतिपरित्यागो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते॥¹¹

हर परिस्थिति में, कर्म, मन और वचन से, स्त्रियों के साथ संगति का त्याग करना ब्रह्मचर्य कहलाता है। हर समय और हर जगह मन, वाणी या शरीर द्वारा यौन संबंध से परहेज करना ब्रह्मचर्य कहलाता है।

दस प्रकार की यमयोगों में पांचवी यमयोग है दया -

दया का लक्षण ये है

परेषां दुःखमालोक्य स्वयैवालोच्य तत्त्वतः।

उत्सादकानुसन्धानं दयेति प्रोच्यते बुधैः॥¹²

दया का गुण ही मनुष्य के सत्य का कारण है, और संसार में दया न करने वाला मनुष्य पशु के समान माना जाता है। यह करुणा भी भगवान का ध्यान करने के चरणों में से एक है। उसने दूसरों की पीड़ा देखी और वास्तव में अपने बारे में सोचा। इस संदर्भ में एक उदाहरण को देखना है - प्रतिदिन किए जाने वाले अनुष्ठानों में पांच प्रमुख यज्ञ है -

1. देवयज्ञ, 2. पितृयज्ञ, 3. मनुष्ययज्ञ, 4. ब्रह्मयज्ञ और 5. भूतयज्ञ।

इनमें से पाँचवाँ यज्ञ करुणाभाव से उत्पन्न प्राणियों का यज्ञ है। यहाँ तक कि ईश्वर के बारे में भी कहा जाता है कि जो भी प्राणियों से यज्ञ छीन लेता है, वही प्राणियों का यज्ञ है। “यद्भूतेभ्यो बलिंहरति तद्भूतयज्ञसंतिष्ठते”।¹³ यह तैत्तिरीयारण्यक का मन्त्र भूतयज्ञ का प्रतीक है।

अष्टांग योग के विज्ञान में छठा यमयोग आर्जव है -

आर्जव का लक्षण -

व्यवहारेषु सर्वेषु मनोवाङ्माय कर्मभिः।

सर्वेषामपि कौटिल्यं ह्यार्जवं परिकीर्तितम्॥¹⁴

सभी परिस्थितियों में और समान सार्वजनिक व्यवहार में, बेईमानी का अभाव ही ईमानदारी की विशेषता है। व्यवहार में, उत्सर्जन में, मन, वाणी और शारीरिक क्रियाओं द्वारा। सभी की कुटिलता नहीं होनी चाहिए।

अष्टांग योग के विज्ञान में सातवा यमयोग क्षमा है -

क्षमा लक्षण ये है -

सर्वात्मना सर्वदापि सर्वत्राप्यपकारिषु।

बन्धुष्विव समाचारः क्षमास्याद्ब्रह्मवित्तम्॥¹⁵

फिर सातवां योग है अंगों के यमयोगों में क्षमा। इसी क्षमा के कारण श्री रामचंद्र को पृथ्वी के समान बताया गया है। उनकी इतनी प्रशंसा इसलिए हुई क्योंकि उन्होंने राक्षसों को भी उचित क्षमा प्रदान की, यद्यपि वे वीरता और अन्य गुणों में दूसरों से श्रेष्ठ थे। यह भी योग के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। यही क्षमा का गुण है: किसी रिश्तेदार जैसे अपराधी की गलतियों को भी याद रखना क्षमाशीलता का एक तत्व है।

अष्टांग योग के विज्ञान में आठवा यमयोग धृति है -

धृति का लक्षण -

इच्छाप्रयत्नराहित्यं ज्ञातेषु विषयेष्वपि।

लोभवत्सु धृतिं धीराः प्रवदन्ति सतां वरम्॥¹⁶

धैर्य की विशेषताएं हैं: यहां तक कि ज्ञात वस्तुओं के प्रति भी इच्छा और प्रयास का अभाव। लालच के सामने धैर्य रखने का दृढ़ समर्थक।

अष्टांग योग के विज्ञान में नौवा यमयोग है मिताहार -

मिताहार लक्षणम्-

भोज्यस्यैव चतुर्थांशं भोजनं स्वस्थचेतसः।

अत्यग्रकटुतिक्ताम्ललवणादिविर्जितम्॥

हितं मेध्यं सुतीक्ष्णं तन्मिताहारं प्रचक्षते॥¹⁷

स्वस्थ मन वाले व्यक्ति को अपने सामान्य भोजन का केवल एक चौथाई भाग ही खाना चाहिए, जिसमें अत्यधिक कड़वाहट, नमक आदि न हो। भोजन में जो अच्छा और पवित्र माना जाता है, उसे मिताहार (संतुलित आहार) कहा जाता है। भोजन की शुद्धता में, सत्त्व की शुद्धता में, सत्त्व की शुद्धता में ही निस्तर स्मृति निहित है। “आहारशुद्धौ सत्त्वसुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः”¹⁸ संतुलित आहार और मनोरंजन के लाभों का आनंद संयमपूर्वक लेना चाहिए। हमें संयमित भोजन करना चाहिए और बिना देरी किए योग न शुरू कर देना चाहिए।

उन्हें अनेक रोग हो सकते हैं, लेकिन योग सिद्ध नहीं होता।

“अद्यतेऽस्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते”।¹⁹ अन्नको इसलिए अन्न कहा जाता है, वह प्राणियों ने खाया जाता है और वह भी प्राणियों को खालेता है।

अर्थात् श्रुति और अन्य विद्वानों के भोजन ग्रहण संबंधी कथनों से यह स्पष्ट है कि योग के साधनों और भोजन के बीच संबंध सुदृढ़ रूप से स्थापित नहीं है। शुद्ध आहार ग्रहण करने पर सत्त्व गुण उत्पन्न

होता है और स्मरण शक्ति प्राप्त होती है। योगी को वर्जित भोजन का सेवन नहीं करना चाहिए और केवल शास्त्रों में वर्णित भोजन ही स्वीकार्य है।

यही योग की सिद्धि की ओर ले जाता है। उचित आहार ग्रहण करते समय भी साधक को उचित रूप से वर्णित भोजन का चौथा भाग ग्रहण करना चाहिए। अन्यथा, यह ज्ञात है कि अधिक भोजन करने से योग की सिद्धि प्राप्त नहीं होती और अनेक रोग हो जाते हैं। इस और अन्य विद्वानों के कथनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि योग साधकों के लिए आहार और विश्राम के नियमों का पालन करना आवश्यक है।

अष्टांग योग के विज्ञान में दसवीं यमयोग है शौच है -

शौच की विशेषताएँ -

निर्गतं नवरं द्रेभ्यो रोमकूपेभ्य एव च।

मलं वदन्ति तद्वारक्षालनं शौचमुच्यते॥²⁰

योग की विशेषताओं में दसवीं अंतर स्वच्छता है। यह इसकी विशेषता है। यह रोमछिद्रों से और बालों के रोमों के माध्यम से बाहर आता है। वे इसे गंदगी कहते हैं, और उसको धोना स्वच्छता कहलाता है। मिट्टी और पानी से बाहरी सतह को दोबारा रगड़ना। बुद्धिमान लोग पहले बताए गए तरीके से शुद्ध किए गए मूत्र की स्वच्छता का ध्यान रखते हैं।

जलों से स्वच्छता की प्राप्ति -

पांच भौतिक शरीरों वाले जीवों की नाक और अन्य नौ द्वारों से निकलने वाले जल, वायु, पसीना और अन्य अशुद्धियों को अशुद्धियाँ कहा जाता है। मिट्टी और जल से उनके भीतर और बाहर की सफाई करना स्वच्छता कहलाता है। चूंकि सभी जड़ी-बूटियाँ पृथ्वी पर ही उगती हैं, इसलिए वहाँ उत्पन्न मिट्टी भी औषधीय गुणों से युक्त होती है। अतः उपनिषदों में कहा गया है, "मृत्तिके हन मे पापं यन्मया दुष्कृतं ...गतिम्"²¹ इस तैत्तिरीयोपनिषद मन्त्र से जलों की प्रार्थना ऐसा किया जा रही है "हे मिट्टी, मैं अपने किए हुए पाप का नाश करता हूँ। हे मिट्टी, तुम ब्रह्मदत्ता हो, कश्यप द्वारा आमंत्रित। मुझे इस मिट्टी में पोषण दो, क्योंकि सब कुछ तुममें ही स्थित है।

सब कुछ मिट्टी में स्थित है। तुमने जिस पाप का नाश किया है, उससे मैं परम गंतव्य की ओर जा रहा हूँ।"

इस प्रकार, चूंकि वेदों में मिट्टी को औषधीय गुणों से युक्त, भगवान् वराह द्वारा उत्पन्न, सृष्टिकर्ता कश्यप द्वारा अभिमंत्रित, पोषण के लिए जिम्मेदार और पापों का नाश करने वाली बताया गया है, इसलिए यह यहाँ भी शुद्धि के साधन के रूप में वर्णित है।

इसी प्रकार से श्रीपांचरात्रागमान्तर्गत अगस्त्यसंहिता के माध्यम से अष्टांग योगों में प्राथमिक यमयोग के दस लक्षण सोदाहरण निरूपित हुआ है।

उपसंहार -

अनेक तरीकों से दर्शाए गए योगशास्त्र में अष्टांगयोग प्रथम और प्रमुख योगाभ्यास है। उसमें भी अनेक प्रकार की साधनाएँ दिखाई

देती हैं। सर्वप्रथम साधकों को यमयोग की साधना करनी पड़ती है। इन दस प्रकार के योगाभ्यासों के फल अतुलनीय और अगणित हैं। इस यमयोग का अभ्यास करने वालों को देखकर मृत्यु के देवता, भगवान् सूर्यपुत्र और नरकलोक के अधिपति यमधर्मराज भी दूर रहते हैं; क्योंकि अहिंसा आदि दस प्रकार के धर्मों के लक्षण इस अष्टांगयोग के अंतर्गत आने वाले यमयोग-प्रकरण में दिखाई देते हैं। यदि एक साधक अपने जीवन में इस यमयोग को सिद्ध (स्वाधीन) कर ले, तो उसका जन्म सार्थक हो जाता है। सकल सद्गुण यमयोग से ही मिल जाते हैं। यमयोग के कारण एक सज्जन का जीवन सफल होकर अंत में स्वर्ग आदि सद्गति को प्राप्त करता है। अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर योगशास्त्र का चिंतन अत्यंत आनंददायी है। "सर्वे सन्तु निरामयाः"। स्वस्ति

सहायक ग्रन्थसूचि -

- | | |
|---------------------------|----------------------|
| 1. भगवद्गीता | 6. तैत्तिरीयारण्यकम् |
| 2. श्रीप्रश्नसंहिता | 7. छान्दोग्योपनिषत् |
| 3. पदञ्जलियोगसूत्रम् | 8. घोरण्डसंहिता |
| 4. मान्त्रिकोपनिषत् | |
| 5. महाभारतम् | |
| पाद टिप्पणी - | |
| 1. श्रीप्रश्नसंहिता 3- 7। | |
| 2. पतंजलियोगसूत्र 1- 2 | |
| 3. श्री. प्र.सं. 3.15 | |
| 4. मा.उ. 3.1.17 | |
| 5. श्री.प्र.सं. 3.17 | |
| 6. अ.सं. 19.43 | |
| 7. अ.सं. 19-44 | |
| 8. अ.सं. 19-45 | |
| 9. श्लोक 19.46 | |
| 10. अ.सं. 19.47 | |
| 11. अ.सं. 19.48 | |
| 12. अ.सं. 19.49 | |
| 13. तै.आ. 2.14 | |
| 14. अ.सं. 19.50 | |
| 15. अ.सं. 19.51 | |
| 16. अ.सं. 19.52 | |
| 17. अ.सं. 19.53 | |
| 18. छा.उ. 6.5.1 | |
| 19. तै.उ. 2.3 | |
| 20. अ.सं. 19.54.55 | |
| 21. तै.उ. 4.1.8 | |